पहला अध्याय : जेंडर और यौनिकता

पहला अध्याय : जेंडर और यौनिकता

I. जेंडर और यौनिकता : अर्थ, तथ्य एवं मिथ

हिंदी में 'जेंडर' और 'यौनिकता' के लिए प्रायः 'लिंग' शब्द का प्रयोग होता है। संक्षिप्त रूप में कहे तो जेन्डर सामाजिकता द्वारा निर्मित है; सामाजिक मान्यता और मानक ही इसके आधार स्तम्भ है। अंग्रेजी के ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में जेन्डर को मानव के लैंगिक संरचना के बजाये उसके स्वभाव के सांस्कृतिक-सामाजिक पहलुओं के रूप में उल्लेखित किया गया है। जबकि यौनिक पहचान जैविक विशेषता है। किसी मनुष्य के यौनिक अंग के आधार पर समाज द्वारा अपने स्थापित मानकों के साथ उसे दी गई विशिष्ट पहचान जेन्डर कहलाता है। समाज अपने स्थापित मान्यताओं की कसौटी पर यौनिक अंग को अब तक तीन रूपों में ही देखता रहा है; और तीन तीन रूपों के आधार पर ही तीन तरह के जेन्डर की अवधारणा हमारे समाज में विद्यमान है- पुरुष, महिला, थर्ड जेन्डर। हर जेन्डर अपने साथ सामाजिक मान्यताओं, आग्रहों का एक खाका जोड़े रखता है और समाज यह उम्मीद करता है कि संबंधित जेन्डर उसी खांके के अनुरूप गतिशील है और रहेगा। सेक्सुअलिटी या यौनिकता एक व्यापक अवधारणा है परंतु दुर्भाग्यवश इसे शारीरिक संबंध स्थापना की क्रिया में उपयोगी एक अंग तक ही सीमित करके रख दिया गया है। सूक्ष्मता से देखा जाए तो यौनिकता भी असल में समाज एवं संस्कृति द्वारा निर्मित व्यवस्था और मानकों से प्रभावित होती है। जेन्डर और यौनिकता एक-दूसरे से अलग हैं। जेंडर को लेकर सामाजिक असमानता की प्रक्रिया को देखते हुए समाजवैज्ञानिकों ने जेंडर न्यूट्रल फैमिली की संकल्पना को पेश किया। हिन्दी का 'लिंग' शब्द बहुधा जेंडर और यौनिकता को एक मानकर चलता है और इसी अर्थ में इसका प्रयोग किया जाता है, जिससे भ्रम की स्थिति पैदा होती है। हिंदी में 'जेंडर' के लिए 'लिंग' के अतिरिक्त किसी और शब्द के न होने के कारण अंग्रेजी के इस शब्द को उसकी अवधारणाओं के साथ हिन्दी में भी आगे लेकर बढ़ा जा सकता है। इस तरह

सरल भाषा में कहे तो समाज द्वारा निर्मित पहचान को 'जेंडर'(अंग्रेजी के 'Gender') और जैविक पहचान को 'यौनिकता'(अंग्रेजी के 'sexuality') कहना उचित होगा। जेंडर और यौनिकता को लेकर तमाम तरह की भ्रांतियां व पूर्वाग्रह मौजूद है।

रोजमर्रा की जिंदगी में जेंडर और यौनिकता एक-दूसरे के साथ घुले-मिले होते है। शिशु के जन्म के साथ ही उसे पुरुष या स्त्री बनाने की आधिकारिक लेबलिंग शुरू हो जाती है। "यौनिकता के उन पहलुओं को जिन्हें जेंडर कहा जाता है, मुख्यतः सांस्कृतिक रूप से निर्धारित होते हैं ; जिसे जन्म के बाद सिखाया जाता है। यह सीखने की प्रक्रिया जन्म से शुरू होती है, धीरे-धीरे बढ़ते अहंकार विकास के साथ इसके प्रभाव शिशु में प्रकट होते हैं। यह सांस्कृतिक प्रक्रिया किसी समाज से निकलती है, लेकिन इसका अर्थ मां के माध्यम से लगाया जाता है। परन्तु वास्तव में उसके शिशु पर जो कुछ भी थोपा जाता है वह समाज के नज़रिये का अपना आदर्श संस्करण है। बाद में शिशु के पिता, भाई-बहिन, मित्र और फिर धीरे-धीरे पूरा समाज उसकी विकासशील पहचान में उपस्थित रहता हैं" [1]।

Robert J. Stoller अपनी पुस्तक 'sex and Gender' के प्रस्तावना में सेक्स और जेंडर के भेद को बताते है -"शब्दकोश इस बात पर बल देता है कि सेक्स का सम्बन्ध जैविकता से है......इस आशय के अनुसार सेक्स का अर्थ पुरुष या स्त्री सेक्स से है तथा जैविक अंग यह निर्धारित करता है कि कोई स्त्री है या पुरुष। यौनिकता शब्द का आशय शरीर रचना तथा शरीर विज्ञान से है। इसका अर्थ स्पष्ट रूप से व्यवहार के अतिबृहत्त क्षेत्र, भाव, विचार तथा कल्पनाओं से है जिसका सम्बन्ध यौनिकता से है, मुख्य रूप से अभी तक जैविकता से नहीं है। यह इनमें से कुछ शारीरिक घटनाओं के लिए है जिसका उपयोग जेंडर शब्द के लिए किया जायेगा : जिसे पुरुष या स्त्री सेक्स कहा जाता है उसे पुरुषत्व या स्त्रीत्व भी कहा जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि शरीर रचना या शरीर विज्ञान का कोई भी अर्थ निकाला जाये। सेक्स और जेंडर एक

साथ बंधे हुए प्रतीत होते है" [2] वे आगे बताते है कि सेक्स और जेंडर अनिवार्य रूप से किसी भी चीज से बंधे नहीं है, दोनों स्वतंत्र तरीके से आगे बढ़ सकता है।

जेंडर के सीखने के प्रभाव लगभग सभी उदाहरणों में मौजूद है, जो बच्चे को अछुता नहीं छोड़ते। "अपने पुत्रों के आरंभिक चरित्र पर माता का प्रभाव और युवतियों के समक्ष स्वयं को प्रभावशाली दिखने की युवकों कि इच्छा हर युग व समय में चरित्र निर्माण का एक महत्वपूर्ण माध्यम रही है और कुछ स्थितियों में सभ्यता के विकास के क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण कदमों का निर्धारक तत्व भी " [3] "मुख्यतः जेंडर पहचान की भावना (स्त्री या पुरुष) का अर्थ तीन स्त्रोतों से लिया गया है : जननांग की शारीरिक रचना और शरीर विज्ञान; बच्चे की जेंडर पहचान में माता-पिता, भाई-बहन और मित्रों की भूमिका; और एक जैविक दबाव जिससे व्यावहारिक(वातावरण) दबाव कम या ज्यादा हो सकता है। ये तीनों स्त्रोत एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं" [4]।

"प्रारंभ में लड़के और लड़कियां जिस दौर से गुजरते हैं, उस दौरान उनके बीच किसी प्रकार का कोई मनोवैज्ञानिक भेदभाव नहीं होता है" [5]। "लड़का शुरू से अपने सेक्स में सहज अभिमान नहीं खोजता किन्तु उसमें यह अभिमान उसके आसपास के लोगों द्वारा जमा दिया जाता है। मां और धाय, लिंग पूजन की परंपरा में अखंड विश्वास रखती हैं। इस प्रकार बच्चे के लिंग को अलग व्यक्तित्व प्रदान कर दिया जाता है। उसका यह अंग वैकल्पिक अहं बन जाता है। लड़का अपने व्यक्तित्व में जिस वरीयता और उत्कृष्टता को पाता है, वे वास्तव में आसपास के माहौल द्वारा उसमें भारी जाती हैं। इसके विपरीत छोटी लड़की का भाग्य बिल्कुल अलग होता है। मां और धाय के मन में अपने सेक्स के प्रति कोई कोमलता या पूजाभाव नहीं रहता। एक प्रकार से छोटी लड़की के पास कोई सेक्स अवयव होता ही नहीं। जहां तक लड़की का सवाल है, वह अपने शरीर में कोई कमी नहीं पाती, बल्कि वह स्वयं पूर्ण होते हुए भी अपने आप को जगत से कुछ भिन्न पाती है। बाह्य परिस्थितिगत कारण उसको अपनी ही नजर में हीन बना देते है"[6]। "माता-पिता, सहपाठी तथा

संस्कृति अपने स्वभाव, चरित्र, सुविधा, प्रतिस्था, श्रेय, हाव-भाव तथा अभिव्यक्ति के माध्यम से पुरुष या स्त्री जेंडर के लिए 'क्या उचित है' विचार तैयार करते हैं। इन्हीं विचारों के योग से शिशु की जेंडर पहचान तैयार होती है"[7]।

"कभी-कभी एक गुण एक सेक्स के लिए निर्धारित किया जाता है तो कभी दूसरे के लिए किया जाता है। कुछ लड़कों को अत्यंत कमजोर माना जाता है तथा विशेष देखरेख की आवश्यकता महसूस की जाती है। कुछ लोगों के अनुसार स्त्रियां घर से बाहर की दुनियां में कमजोर होती है तो कुछ का मानना है कि स्त्री बोझ उठाने के लिए उपयुक्त संवाहक है क्योंकि स्त्री का सिर पुरुषों की तुलना में अधिक शक्तिशाली हैं। हमारे यूरोपीय पारंपरिक धर्म व कुछ अन्य धर्मों ने अपने धार्मिक पदानुक्रम में स्त्रियों को निम्न या हीन भूमिका प्रदान की है। तो कुछ धर्मों ने अलौकिक दुनिया के साथ प्रतीकात्मक सम्बन्ध की स्थापना की है। "[8]

जेंडर को समझना केवल महिला तथा पुरुष और उनके बीच के संबंधों को समझना नहीं है। जेंडर को समझने के लिए पितृसत्ता, संबंधों की सत्ता, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विकासक्रम को भी समझना आवश्यक है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में "घर के अंदर भी पुरुष ने अपना आधिपत्य जमा लिया। नारी पदच्युत कर दी गई। वह जकड़ दी गई। वह पुरुष की वासना की दासी, संतान उत्पन्न करने का एक यंत्र मात्र बनकर रह गई। वीर-काल के और उससे भी अधिक क्लासिकीय काल के यूनानियों में नारी की यह गिरी हुई हैसियत खास तौर पर देखी गयी। बाद में धीरे-धीरे तरह-तरह के आवरणों से ढककर और सजाकर और आंशिक रूप में थोड़ी नरम शक्ल देकर उसे पेश किया जाने लगा, पर वह दूर नहीं हुई" [9]।

Kate Millett (केथरीन मुरे मिलेट) 1960 तथा 70 के दशक के उत्तरार्द्ध में स्त्रीवादी संघर्ष की सक्रिय सदस्य तथा राष्ट्रीय महिला संगठन समिति की सदस्य थीं। मिलेट सत्ता और वर्चस्व की उस अवधारणा को व्यक्त करती है जो यौन गतिविधियों में शामिल होता हैं। यह अवधारणा एक को सहारा देती

है तो दूसरे को अधीन बनाती है। "पितृसत्ता का सिद्धांत दो रूपों में काम करता है: पुरुष महिला पर हावी रहता है और बड़ा पुरुष छोटे पुरुष पर" [10]।

"बुनियादी पितृसत्तात्मक राजनीति के माध्यम से स्वभाव, भूमिका और स्थिति के सम्बन्ध में दोनों जेंडरों के 'समाजीकरण' द्वारा यौन राजनीति सहमति प्राप्त करती है। पुरुषों में पुरुष श्रेष्ठता का पूर्वाग्रह व्यापक रूप से स्वीकृत है जो उनमें उनके उत्कृष्ट (उच्चतम) और स्त्री के निकृष्ट (निम्नतर) स्थिति के लिए मान्यता प्रदान करती है। पहले स्वभाव में मानव व्यक्तित्व के निर्माण के साथ ही साथ शोषक समूह के मूल्यों तथा आवश्यकता पर आधारित रूढ़िगत यौनिक विभाजन शामिल है। न्यायिक निर्णय आचार संहिता द्वारा यौन भूमिका के हावभाव तथा दृष्टिकोण को विस्तृत करने का काम करता है। गतिविधि के रूप में शिशु से लेकर स्त्री बनने तक यौन भूमिका उस पर घरेलु सेवा की उपस्थिति को बनाये रखती है तथा मानव के उपलब्धि के रूप में पुरुष की रूचि व महत्त्वकांक्षा को महत्त्व देती है" [11]।

यह समझना जरुरी है कि जो मूल्यबोध पितृसत्तात्मक समाज और परिवार को एकता के सूत्र में बाँधने का काम करते हैं वहीं मूल्यबोध स्त्रियों की स्वतंत्रता और विकास के मार्ग में अवरोधक होते हैं। "पितृसत्तात्मक समाज की आधारशिला का मूलरूप परिवार तथा उसकी भूमिकाएं हैं। परिवार व्यापक समाज के प्रतिनिधि के रूप में काम करता है। परिवार न केवल अपने सदस्यों को समायोजित होने तथा अनुरूप व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित करता है बल्कि पितृसत्तात्मक राज्य की सरकार के इकाई के रूप में कार्य करता है जो परिवार के प्रमुखों के माध्यम से अपने नागरिकों पर शासन करता है। यहाँ तक कि यह पितृसत्तात्मक समाज उन्हें कानूनी नागरिकता भी प्रदान करता है। परिवार के माध्यम से महिलाओं पर शासन किया जाता है। परिवार का राज्य से कोई औपचारिक सम्बन्ध नहीं होता है" [12]।

Michel Foucault (मिशेल फूको) के अनुसार- "सत्ता अनिवार्य रूप से सेक्स का नियम निर्धारित करता है। सत्ता सबसे पहले सेक्स को बाइनरी व्यवस्था में विभाजित करता है -वैध और अवैध ; तथा मान्य

और वर्जित। दूसरा सत्ता सेक्स के लिए एक 'आदेश' निर्धारित करता है जो एक ही समय में संचालित होता है। कानून के नियम के आधार पर सेक्स की व्याख्या की जाती है। अंततः इन्हीं नियमों के आधार पर सत्ता कार्य करती है। सेक्स पर सत्ता की पकड़ भाषा के माध्यम से बनी रहती है। दरअसल यह कानून के नियम के आधार पर व्यक्त होती है"[13]। फूको का मानना है कि सत्ता न सिर्फ़ दमन का एक ज़रिया है बल्कि क़ानून नियंत्रण और निषेध की सक्षमता भी रखती है। सत्ता में उपरी-स्थिति बनाए रखने के संघर्ष में जिस प्रकार लैंगिकता और अन्य यौन-संबंधी सामाजिक-गतिविधियों पर नियंत्रण और निषेध का प्रयोग होता है, वो Repressive hypothesis (दमनकारी परिकल्पना) का ही एक अंश है।

Simone de Beauvoir (सीमोन) लिखती है कि "जेंडर एक ऐसा शब्द है जिसका सम्बन्ध जैविकता से नहीं अपितु मनोवैज्ञानिकता या संस्कृति से है। यदि सेक्स के लिए उचित शब्द पुरुष या स्त्री है तो जेंडर से संबंधित शब्द 'पुल्लिंग' और 'स्त्रीलिंग' है। संभवतः बाद में यह सेक्स (जैविक) से स्वतंत्र हो जायेगा" [14]।

'जेंडर' एक ऐसा शब्द है जो एक तरफ इस शब्द की संरचना की प्रक्रिया की पड़ताल करता है तो दूसरी तरफ 'सत्ता' और 'शक्ति' की निर्मिति के गाँठ को भी खोलता है। इस निर्मिति का शक्तिशाली औजार नियम, निर्धारण और बंटवारा है जिसने समाज का जेंडरीकरण किया और उसे दो खेमों 'स्त्री' और 'पुरुष' में बाँट दिया। बकौल ऋचा वी. गीता - "मर्द और औरत इन्हीं नियमों के भीतर जीवन जीते हैं। इस तरह के नियम-विधान, उसकी संरचना और व्यक्ति का उसके प्रति व्यवहार - सब मिलकर एक सत्ता निर्माण करते है जिसे हम 'पितृसत्ता' के नाम से जानते हैं।" [15] पितृसत्ता अर्थात वह सत्ता जिसके केंद्र में पिता या पुरुष का पहला सत्ता स्थापित हो। पितृसत्ता पुरुष को सत्ताधारक तो बनाता ही है साथ ही उसे पहले पैदान अर्थात फर्स्ट जेंडर बनाने की रणनीति भी रचता है। इस रणनीति के तहत 'स्त्री' दूसरे जेंडर या जिसे सीमोन द बोउआ 'सेकेंड सेक्स' कहती हैं, कि निर्मिती होती है। Simone de Beauvoir 'स्त्री पैदा नहीं होतो, स्त्री

बनायी जाती है' कहकर 'स्त्री' को 'सेकेंड''जेंडर' बनाने की प्रक्रिया पर विस्तार से चर्चा करती हैं। इसी बात को मल्लिका सेनगुप्त भी कहती है "भाषा की सूक्ष्म चतुराई से निर्धारित हो जाता है कि कौन यंत्र का चालक है और कौन यंत्र। पहला लिंग पुल्लिंग यानी फर्स्ट सेक्स है; जो सबल, प्रत्यक्ष, सकारात्मक, शक्तिशाली, विजयी है और स्त्रीलिंग दूसरा लिंग यानी सेकेंड सेक्स है; जो कि अबला, अप्रत्यक्ष, नकारात्मक, पुरुष के विजय पर गर्व करनेवाली है" [16]। पुरुष को सबल और स्त्री को दुर्बल बनाने की अवधारणा उन तमाम कारकों से निर्धारित होता है जिनका प्रभाव या हस्तक्षेप हमारे जीवन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से होता है। इन कारकों की बागडोर उस सत्ता के हाथ में होती है जिसे पितृसत्ता के नाम से जानते है। पितृसत्ता उन कारकों को संचालित और नियंत्रित करती है। इन कारकों को मल्लिका सेनगुप्त के शब्दों में 'कोड ऑफ़ कंडक्ट' भी कहा जा सकता है। समाज दरअसल बड़ी ही बारीकी से जेंडर के प्रति भ्रामक अवधारणा ,पार्थक्यता की टैगलाइन तथा पक्ष-प्रतिपक्ष की भूमिका गढ़ती है। जिसे मल्लिका सेनगुप्त अपनी किताब 'स्त्रीलिंग निर्माण' के प्रारंभ में ही कोड ऑफ़ कंडक्ट या विधि-विधान की तख्ती का हवाला देती हैं। इस तख्ती की बारीकियों की चर्चा करते हुए लेखिका 'हेलेन सिक्सस' के उस सूत्र की चर्चा करती है जिसने स्त्री-पुरुष को एक-दूसरे के विपरीत लाकर खड़ा कर दिया -

सूर्य - चन्द्र

संस्कृति- प्रकृति

दिवस - यामिनी

मेधा - आवेग

बुधिमत्ता - अनुभूतिशीलता

प्रज्ञा- वेदना

सक्रिय - निष्क्रिय

पुरुष- नारी

जेंडर और यौनिकता की राजनीति में पुरुषसत्तात्मक रवैये को इस बात से भी समझा जा सकता है कि कैसे कोमल और शांत या किसी शारीरिक रूप से कमजोर पुरुष को 'नामर्द' तथा किसी बहादुर स्त्री के लिए 'मर्दाना' जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यानी की बहादुर होने का आशय है मर्द जैसा होना, कठोर होना। सेक्सुअलिटी देह से जुड़ी होने के बावजूद भी देह के दायरे तक ही सीमित नहीं होती। परंपरा,धर्म, संस्कृति, इतिहास जैसे औजार उसे गढ़ने का काम करते हैं। इसमें कोई शक नहीं है कि मान्यताप्राप्त जेंडर और यौनिकता की अवधारणात्मक स्थापना पितृसत्ता ने की। इसे प्रस्फुटित करने का कार्य इस विषय पर न बोलने की हिचकिचाहटों ने और इसे एकमात्र तथा अंतिम घोषित करने का काम समाज के दोहरें मानकों, रवैये तथा नैतिकता ने किया।

जेंडर का सम्बन्ध संस्कृति से है। उसका आशय उन सामाजिक श्रेणियों से है जिनमें मर्द व औरतें 'पुरुषोचित' और 'स्त्रियोचित' रूप ले लेते हैं। इन्हीं विशेषताओं के साथ व्यक्ति को विकसित किया जाता है। "हम कह सकते हैं कि दूसरे प्राणियों की तुलना में मनुष्य जाति में स्त्री-पुरुष का विशिष्टीकरण वास्तव में सिर्फ प्रजनन से संबंधित नहीं होता। पुरुष यौन-स्थिति को एक विशिष्टता प्रदान करता है और अपनी यौन-क्रियाओं की मध्यस्थता द्वारा एक मूल्य प्रक्षेपित करता है" [17]।

Robert Hamilton (रोबर्ट हैमिल्टन) : The Liberation of Women में रोबर्ट हैमिल्टन ने बताया है कि पूंजीवाद के साथ-साथ किस तरह उत्पादन तथा भोग, नौकरी तथा घर के काम, पब्लिक तथा प्राइवेट जैसे विपरीत शब्दों का जन्म हुआ, जिसने जेंडर(स्त्री-पुरुष के बीच) विभाजन रेखा खिंचा।

जेंडर एक सामाजिक आयाम है जो हमें औरत या मर्द की पहचान में बांटता है। यह पहचान इतनी गहरी है कि हम इन सामाजिक पहचानों में ही जीने लगते हैं। इस सामाजिक प्रक्रिया में जेंडरीकरण के तहत पहचान के साथ-साथ भूमिका बनाये जाते है और कायदे निर्धारित किये जाते है। बचपन से ही परिवार व समाज में जेंडर का अनुकूलन आरम्भ हो जाता है। सर्वप्रथम जननांगों का जेंडरीकरण किया जाता है। नवजात शिशु के जननांग को जेंडर प्रदान किया जाता है। निरंतर[18] के अनुसार "जन्म के समय से ही लड़के और लड़कियों को उनके अलग-अलग रूप में ढालने की जो सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया शुरू होती है उसे 'जेंडरीकरण' कहा जा सकता है।"[19]। मर्दों तथा औरतों, लड़के तथा लड़कियों में अलग-अलग पसंद-नापसंद, हुनर, क्षमताएं पैदा की जाती हैं, फिर इस सबको प्राकृतिक मान लिया जाता है। मानो जैसे हमेशा से सबकुछ ऐसा ही रहा है। अस्सी के दशक में जेंडर की धारणा ने यह समझने में सहायता की कि दरअसल समस्या समाज और संस्कृति द्वारा दी गयी औरत-मर्द की परिभाषा में है। इस संबंध में बिना अग्रवाल का मत द्रष्टव्य है - "जेंडर संबंधों से तात्पर्य है, औरतों तथा मर्दों के बीच शक्ति या सत्ता के सम्बन्ध। ये सम्बन्ध दोनों लिंगों के बीच श्रम विभाजन, भूमिका तथा संसाधनों के बंटवारे सहित भिन्न-भिन्न सामाजिक रिवाजों और विचारधाराओं के रूप में सामने आते हैं। ये औरतों तथा मर्दों के लिए अलग-अलग योग्यताएं, रवैये, इच्छाएं, व्यक्तित्व के गुण तथा बर्ताव करने के तरीके आदि निश्चित करते हैं। जेंडर सम्बन्ध, वर्ग, जाती, नस्ल जैसे असमानतापूर्ण ढांचों की मदद से सामाजिक रीती-रिवाज और विचारधाराएँ बनाते हैं और इन्हीं रिवाज़ों व विचारधाराओं के द्वारा जेंडर सम्बन्ध भी बनाये जाते हैं। ये सम्बन्ध सामाजिक रूप से बनाये हुए होते हैं तथा समय और स्थान के हिसाब से उतने ही अलग-अलग भी होते हैं। "[20]

स्त्रियोचित और पुरुषोचित कंडीशनिंग अलग-अलग जगहों पर तथा विभिन्न सामाजिक समूहों में अलग-अलग होती हैं। असम और तमिलनाडु में हिन्दू समाज के लोग लड़की के माहवारी शुरू होने पर उसे धूमधाम से मनाते हैं, जैसे शादी धूम-धाम से मनाया जाता है। रिश्तेदारों को बुलाया जाता है, दावत

होती है, लड़की को दुल्हन की तरह सजाया जाता है। यही नहीं, असम के कई समुदायों में लड़की की माहवारी शुरू होने पर केले के पेड़ से उसकी शादी भी करायी जाती है। केले के पेड़ को दूल्हा माना जाता है जबकि कितनी ही जगहों पर माहवारी होने को छुपाया जाता है।

जेंडर की तरह यौनिकता से जुड़े अपने ही कायदे हैं। यथा - कौन, कब, कहाँ, कैसे और किसके साथ यौन इच्छाएं ज़ाहिर कर सकता है। जेंडर और यौनिकता दोनों के साथ कायदे जुड़े है। दोनों एक-दूसरे से अलग भी है और एक-दूसरे को प्रभावित भी करते है।

नारीवादी एक्टिविस्ट Mariya Mis (मरिया मीस) लिखती हैं- "पुरुषत्व और नारीत्व जैविकीयता का नहीं बल्कि एक लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। हर ऐतिहासिक युग में, उस समय के उत्पादन के मुख्य ढंग के आधार पर पुरुषत्व और नारीत्व को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया गया है। अतः स्त्री व पुरुष अपने शरीरों के साथ गुणात्मक रूप से अलग सम्बन्ध विकसित करते रहे हैं। इस प्रकार मातृक समाजों में, नारीत्व को सभी उत्पादनों के सामाजिक प्रतिमान के रूप में, जीवन उत्पादन के मुख्य सक्रिय सिद्धांत के रूप में देखा जाता था। सभी औरतों को 'माता' के रूप में परिभाषित किया जाता था। पूंजीवादी परिस्थितियों में सभी औरतों को 'गृहिणी' के रूप में परिभाषित किया जाता है (सभी पुरुष परिवार पालक समझे जाते हैं) तथा मातृत्व, गृहिणी रूप का ही एक हिस्सा बन गया है" [21]।

Judith Butler (जूडिथ बटलर) कहती है कि जेंडर देह का लिबास है, देह जिसका एक लिंग होता है । इस कॉस्टयूम को पहनकर हम ताउम्र अपने जेंडर की भूमिका को निभाते हैं और फिर इसे बार-बार परफॉर्म करते हुए हम जेंडर स्टीरियोटाइप बनाते हैं [22]। "मेरे लिए यह स्वीकार करना आवश्यक है कि जेंडर अदायगी (व्यवहार) के ध्वंस का सम्बन्ध यौनिकता या यौनिक प्रथा से नहीं है। मान्यताप्राप्त यौनिकता के मद्देनजर बिना किसी प्रश्न या पुनर्भिन्यास के अस्पष्ट जेंडर का प्रतिपादन कर दिया जाता है" [23]। "यदि सेक्स

(यौनिकता) को स्थिर चरित्र के रूप में चुना जाता है, तो संभवतः सेक्स नामक यह निर्माण सांस्कृतिक रूप से जेंडर के रूप में निर्मित होता है। ” [24]

Simone (सीमोन) कहती है कि ‘स्त्री बनाई जाती है, पैदा नहीं होती’। बनाने का आशय जेंडर भूमिका बनाने से है। स्त्री के लिए स्त्रियोचित भूमिका और पुरुष के लिए पौरुष भूमिका। और इस तरह दुनियां दो ध्रुवों में बंट गयी। दोनों के लिए अलग-अलग भूमिकाएं बनी। इस भूमिका के आधार पर दो तरह के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। और इन दोनों को एक-दूसरे के विपरीत खड़ा किया गया।

Sigmund Freud (फ्रायड) ईडिपस कॉम्प्लेक्स के जरिये बताते है कि बच्चे विपरीत लिंगी अभिभावक के प्रति आकर्षण महसूस करते हैं और समलिंगी अभिभावक से प्रतिद्वंद्विता, लेकिन बड़े होते-होते वे समंजन करते हैं और स्वयं को पुरुष और स्त्री कि तरह बड़ा होते पाते हैं। लड़कियां माँ जैसी और लड़के पिता के जैसे बनते हैं। फ्रायड की यह व्याख्या इस बात को समझने में मदद करती है कि कैसे स्त्री-पुरुष बनते और बनाये जाते हैं।

Foucault (फूको) ‘सेक्स’की श्रेणीबद्धता को ‘नियामक आदर्श’ कहते है। Butler (बटलर) कहती है कि इस अर्थ में ‘सेक्स’न केवल एक आदर्श के रूप में कार्य करता है, बल्कि एक नियामक अभ्यास का हिस्सा है जो इसके द्वारा संचालित निकायों का उत्पादन करता है अर्थात जिसका नियामक बल एक प्रकार की उत्पादक शक्ति है, सीमांकन करने की शक्ति, परिचालित करने की शक्ति और अपने नियंत्रण में लेने की शक्ति। [25] ये नियामक शक्तियां औरतों और मर्दों की भूमिकाओं के साथ ही साथ इनके बीच के सम्बन्ध को भी तय करती है। इस सम्बन्ध का आधार होता है ‘यौनिकता’। यौन व यौनिकता के बीच एक महत्त्वपूर्ण फ़र्क है। यौन शब्द का उपयोग एक ‘क्रिया’ या ‘व्यवहार’ के लिए होता है। यौनिकता एक काल्पनिक सिद्धांत है जिसमें शारीरिक, यौनिक, भावनात्मक व व्यावहारिक पक्ष मौजूद हैं। इसकी रचना उन तमाम तरीकों से होती है जिनसे हमारे अनुभव व ज़ज्बात व्यक्त होते हैं। यौनिकता की रचना हमारी

भावनात्मकता यानी हम कौन व क्या हैं , से होती है । ये न सिर्फ यौनिक पहचान से जुड़ी है बल्कि इसमें यौनिक मानदंड, व्यवहार, बर्ताव, चाहत, अनुभव, यौनिक ज्ञान और कल्पना भी शामिल होती है जो संबंधों के तहत गढ़ी जाती है। यौन, यौनिकता और यौनिक सम्बन्ध कई अर्थों में एक-दूसरे से जुड़े भी है और कुछ अर्थों में अलग भी। यौनिक संबंधों में यौन और यौनिकता बेशक निहित है, परन्तु यौन और यौनिकता में यौनिक सम्बन्ध हमेशा निहित नहीं होता।

महिलावादी सामाजिक कार्यकर्ता कमला भसीन लिखती हैं- “पितृसत्तात्मक विचारधारा बनाने और उसे आगे बढ़ाने में कई संस्थाएं शामिल हैं जैसे परिवार, स्कूल, टी.वि, रेडिओ, धर्म, कानून इत्यादि। सामाजिक व्यवस्थाओं को चलाते रहने तथा लोगों के दिमाग पर नियंत्रण पाने में विचारधाराएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं” [26]। एक पुरुष इसलिए पुरुष माना जाता है क्योंकि वह एक महिला के लिए इच्छा रखता है। अगर उसकी इस इच्छा में परिवर्तन होता है तो वह पुरुषत्व के सारे मानकों से ढकेल दिया जाता है चाहे वह पुरुष होने के अन्य तथाकथित मानकों में फिट ही क्यों न बैठता हो। यह तथ्य इस बात की पुष्टि करता है कि समाज कैसे यौनिकता के घेरे में जकड़ा है और कैसे यह नियम उसे संचालित और उसके व्यक्तित्व को निर्धारित करते है। अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा अपने जन्मदिन के दिन ‘ग्लैमर’ मैगज़ीन के लिये लिखे अपने लेख में लिखते है कि ‘अपनी बेटियों साशा और मालिया को पालते हुए मैंने यह महसूस किया है कि लड़कियों के ऊपर समाज का कितना प्रेशर रहता है। यह हमें दीखता नहीं। पर हमारा कल्चर चुपके-चुपके उनके दिमाग में यह भर रहा होता है कि उन्हें कैसा दिखना है, किस तरह का बर्ताव करना है। यहाँ तक की किस तरह सोचना है। हमें यह सोच बदलनी होगी, जिसके चलते लड़कियों को चुप-चाप रहना और लड़कों को मर्दाना होना पड़ता है। जो हमारी बेटियों को खुलकर बोलने और लड़कों को आंसू बहाने से रोकता है’।

पितृसत्ता एक जेंडर को अपरिमित शक्ति देकर अन्य जेंडर की गुलामी का दर्शन है। मृणाल पाण्डेय लिखती है -"जिस मायने में औरतों का चित्रण भारत के कमर्शिअल थियेटर या सिनेमा जगत में किया जाता रहा है, उस मायने में शायद कोई भी अभिनेत्री जन्मना 'औरत' नहीं होती। स्टेज या पर्दे पर स्त्री के रूप में स्वीकार्य वे तभी होती हैं जब पहले औरत के रूप में उन्हें गढ़ लिया जाता है" [27]। पर क्या सिर्फ औरतें गढ़ी जाती है ? क्या यह समाज पुरुष को नहीं गढ़ता ? क्या इस सोच को जीवंत रखने के लिए जल और खाद्य नहीं देता ? दरअसल प्रश्न स्त्री या पुरुष का नहीं बल्कि उस सोच, उस व्यवस्था से है जो यौनिकता के कायदे निर्धारित करता है और उसी कायदे के अनुरूप सोचने के लिए विवश करता है। अर्थात् अपरिमित शक्ति प्राप्त जेंडर भी पितृसत्तात्मक मानसिकता के आधार पर गढ़ा जाता है। सुजाता लिखती है "स्त्री में स्त्रियोचित और पुरुष में पुरुषोचित लक्षण इस कदर हो गये कि ज़रा सा हेर-फेर होने से वह हास्यास्पद हो गया या घृणा या त्याग के योग्य। जेंडर छवियाँ रूढ़ हो गयीं। स्टीरियोटाइप। स्त्रैण और पुरुष गुणों का दोनों लिंगों में अदला-बदली का संभव होना जहाँ स्वभाव और जन्म से संभव था, उसे सामाजिकता ने असंभव कर दिया। वह यह भी लिखती है कि यह बात लैंगिक-द्वित्व और उनके वैपरीत्य पर ही आकर ख़त्म नहीं होती, सभी जेंडरों के बिच एक ही जेंडर के गुण इतने सर्वश्रेष्ठ मान लिए गये कि अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए बाकियों को उन्हीं के पैमानों पर खड़ा उतरना ज़रूरी हो गया "[28]।

क्या करना है और क्या नहीं करना है, कैसे और कब करना है और कब नहीं, ये सारे नियम दरअसल यौनिकता को नियंत्रित करने के मकसद से बनाये जाते है। और यही नियम फिर यौन संबंधों पर हावी होते है। कभी अविवाहित स्त्री-पुरुष के बिच यौनिक सम्बन्ध बन जाने का भय सताता है तो कई बार विवाहित स्त्री-पुरुष के बिच यौनिक सम्बन्ध न बन पाने की चिंता खाये जाती है। इसमें कोई शक नहीं की सत्ता द्वारा बनाये गये यौनिकता के नियम समाज और उसके सोच को नियंत्रण में ले लेता है। और धीरे-धीरे मनुष्य इस बाइनरी व्यवस्था के अधीन हो जाता हैं। यह कल्पना करना भी कठिन हो जाता है कि जो आज जैसा है

और दिखता है, दरअसल वैसा नहीं है। बेहद आश्चर्यजनक बात है कि एक तरफ समाज यौनिकता पर खुले जुबां बात तक नहीं करना चाहता और दूसरी तरफ सारी राजनीति यौनिकता के इर्द-गिर्द घुमती नज़र आती है जिससे समाज का कोई हिस्सा अछूता नहीं है। यह बात अलग है कि कब यौनिकता महत्त्वपूर्ण बन जाती है और कब अमहत्त्वपूर्ण, इसकी परिभाषा गढ़ी जाती है। बदले और कुंठा कि तृप्ति के लिए बलात्कार जैसे घिनौने कुकृत्यों का सहारा लिया जाता है। गरिमा श्रीवास्तव अपनी पुस्तक 'देह ही देश' में इस बात की जिक्र करती है कि किस तरह पुरा का पुरा युद्ध देह अर्थात् यौनिकता की बदौलत लड़ा जाता है। सुजाता भी लिखती है -"समाज अब भी उस कबीलाई मानसिकता में है कि किसी समुदाय से बदला लेना या सबक सिखाना है तो उसकी औरत या बच्ची पर यौनिक हमला किया जाए। यह सीधा-सीधा उस व्यवस्था का मामला है, जो अपने मूल चरित्र में मर्दाना है"[29]।

यौनिकता को बाइनरी खांके में बांटना पितृसत्तात्मक व्यवस्था को जीवित रखने का माध्यम बनाया जाता है। यौनिकता भी जेंडर के समान एक सामाजिक-सांस्कृतिक-ऐतिहासिक अवधारणा है। सुजाता लिखती है-"एक ऐसी देह, जिसकी भूख-प्यास-इच्छा-अनिच्छा-आकार-प्रकार-ढँकना-छिपाना, श्लील-अश्लील, उपयोग-अनुपयोग, सब उन प्रतिमानों से तय होता है, जो खुद उसके बनाये नहीं हैं। जिसके पास देह हो, लेकिन वह विदेह रहे, ऐसा मनुष्य, मनुष्य नहीं, वस्तु के समान है। " [30] क्या कारण है कि एक पति अपनी यौनिक चाहत को बड़ी बेबाकी से अभिव्यक्त कर लेता है परन्तु उसी बेबाकी से पत्नी अपनी इच्छाओं को ज़ाहिर नहीं कर पाती ? क्या यह पितृसत्तात्मक-शक्ति-संरचना से संचालित सामाजिक ट्रेनिंग का हिस्सा नहीं ? स्त्रियोचित व्यवहार व पुरुषोचित व्यवहार का अनुकूलन करते-करते हम इसके आदि हो जाते है। समाजीकरण की प्रक्रिया के तहत यौनिकता और यौनिक चुनाव को इस कदर गढ़ा और मढ़ा जाता है कि कब वह पसंद-नापसंद के ढांचे में ढल जाती है इसकी खबर स्वयं चुनाव करने वाले तक को नहीं होती।

स्त्री के देह से शुरू हुआ अधिकार धीरे-धीरे अपना विस्तार करता चला जाता है और स्त्री की समूची सत्ता को अपने में समेट लेता है। बकौल मल्लिका सेनगुप्त -"दुर्गा देवों की शक्ति हैं। दुर्गा की मूर्ति बनाकर पूजा की जाती है और चंद ही दिनों में उनका जल में विसर्जन कर दिया जाता है, यह कहकर कि वे अपने ससुराल चली गई हैं। बिहार के गावों में दुर्गा-विसर्जन को 'मूर्ति भसावन' भी कहते हैं। 'भसावन' का अर्थ स्त्री के अस्तित्व को पूरी तरह मिटा देना; उससे पिंड छुड़ाना है। यही तो समाज करता है औरतों के साथ। कभी उसे भ्रूण में ही 'भसा' देता है, तो कभी बहू के रूप में भसाता है, तो कभी बेटी-बहन के रूप में किसी ऐसे घर में रख आता है जहाँ हर दम उसे 'भसाने' की कोशिश चलती रहती है। दुर्गा को प्रति वर्ष 'भसाने' में सबसे ज्यादा दिलचस्पी पुरुषों की होती है। ढोल-ताशे, रंग-गुलाल के साथ श्रद्धा-भक्ति के नाम पर देवी से वे अपना पीछा छुड़ा लेते हैं। देवी की स्तुति करते हैं, प्रार्थना में झुकते हैं, फिर छिन्न-भिन्न भी कर देते हैं। इस क्रिया से पुरुषों का आत्मगौरव बढ़ता है। ज्यों-ज्यों यह गौरव बढ़ता गया, पुरुष औरतों का शोषण भी उतने ही ढंग से करने लगे। पुरुष निर्माता की भूमिका में है,इसलिए उसने सोचा कि स्त्री को अस्थिर कर, अपदस्थ कर ही अपनी सत्ता कायम रखी जा सकती है"[31]।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि जेंडर और यौनिकता के अंतरसंबंधों के तत्व न सिर्फ समाज के वर्चस्वशाली सत्ता द्वारा गढ़ा गया है बल्कि उसके अनुकूलन हेतु विभिन्न मानवीय व अमानवीय अर्गलावों कि निर्मिति भी हुई है। जेन्डर और यौनिकता संबंधी सामाजिक मिथकों को विश्व के विभिन्न समाजशास्त्रियों, भाषाविदों, स्त्री विमर्शकरों ने चुनौती दी हैं और जेन्डर व यौनिकता की व्यापक अवधारणा को शब्दबद्ध किया है।

II. जेंडर और यौनिकता : एक व्यापक अवधारणा

आधुनिकता, विकास, तकनीकियत और सोच-समझ की व्यापकता एवं गहराई ने निश्चित रूप से सामाजिक संवेदनशील पहलुओं को सूक्ष्मता से देखने व विश्लेषित करने का एक नया और समावेशी दृष्टिकोण प्रदान किया है।

अंतर्राष्ट्रीय संस्था डब्लूएचओ (WHO) द्वारा 2004 में दी गई यौनिकता की परिभाषा -'यौनिकता मनुष्य होने का एक केंद्रीय पहलू है। सेक्स, जेंडर पहचान व भूमिकाएं, यौन रुझान, कामुकता, आनंद, अंतरंगता और प्रजनन, ये सभी यौनिकता के तहत आते हैं। मनुष्य अपनी सोच, अपनी कल्पनाओं, कामनाओं, विश्वासों, रवैयों, मूल्य-मान्यताओं, व्यवहारों, भूमिकाओं व संबंधों में यौनिकता का अनुभव करता है और उसे व्यक्त करता है। हालाँकि यह ज़रूरी नहीं है कि हर व्यक्ति स्पष्ट रूप से इसका अनुभव करे या इसे व्यक्त करें। हमारी यौनिकता बहुत सारे शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, नृजातीय, कानूनी, ऐतिहासिक, धार्मिक और आध्यात्मिक कारकों की अंतर्क्रियाओं से प्रभावित होती है'।

Health, Empowerment, Rights and Accountability (हेल्थ, एम्पावरमेंट, राइट्स एंड एकाउंटेबिलिटी (हेरा स्टेटमेंट) के अनुसार-

1. 'यौनिक स्वास्थ स्त्रियों और पुरुषों द्वारा अपनी यौनिकता को अभिव्यक्त करने व उसका आनंद लेने की, और ऐसा अनचाहे गर्भ, ज़ोर-ज़बरजस्ती, हिंसा और भेदभाव के बिना तथा यौन संबंधी बीमारी के जोखिम से मुक्त हो, कर पाने की क्षमता है। यौनिक स्वास्थ्य का अर्थ आत्मसम्मान, मानव यौनिकता की एक सकारात्मक सोच और यौनिक संबंधो में आपसी सम्मान पर आधारित एक सूचित, आनंदमय और सुरक्षित यौनिक जीवन व्यतीत कर पाना भी है। यौनिक स्वास्थ्य, जीवन, निजी संबंधों और यौनिकता पर आधारित पहचान की अभिव्यक्ति में वृद्धि करता है। यह

सकारात्मक रूप से वृद्धिपरक है, इसमें आनंद सम्मिलित है, और यह स्वाधीनता, संचार तथा संबंधों को निखारता है’।

2. ‘यौनिक अधिकार मानव अधिकारों के मूलभूत तत्व हैं। इनमें आनंदमय यौनिकता को अनुभव करने का अधिकार शामिल है, जो अपने आप में आवश्यक है, और इसके साथ ही यह लोगों के बीच संवाद और प्रेम का मूल माध्यम है। यौनिक अधिकार, यौनिकता के ज़िम्मेदार प्रयोग में स्वाधीनता और स्वायत्ता के अधिकार को सम्मिलित करते हैं’।

अपने ऐतिहासिक विकास की प्रक्रिया में समझा जा सकता है कि जेंडर की बाइनरी व्यवस्था कोई प्राकृतिक अवस्था नहीं है। इसके विकास का इतिहास है। बाइनरी व्यवस्था के आधार पर नियंत्रण की इच्छा पितृसत्ता के मूल में है। जब-जब बाइनरी जेंडर व्यवस्था के खिलाफ़ आवाज़ उठती है तब-तब पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था का जिक्र होता है। दरअसल इस व्यवस्था के तहत बाइनरी व्यवस्था को सुचारू रूप से चलते रहने के लिए स्त्री-पुरुष प्रशिक्षित किए गये हैं।

यौन अभिविन्यास(orientation) का सम्बन्ध निजता से है। यौन अभिविन्यास के आधार पर किसी व्यक्ति के साथ भेदभाव व्यक्ति की गरिमा एवं ‘स्व’ का अपमान है। समानता समाज में प्रत्येक व्यक्ति के यौन अभिविन्यास को एक समान मानने और अपनाने की मांग करती है। निजता का अधिकार और यौन अभिविन्यास का संरक्षण संविधान के अनुच्छेद 14,15 और 21 मौलिक अधिकारों के मूल में निहित हैं।

हमारे समाज में व्यक्ति का जन्म होता है तो वह जेंडर लेकर नहीं आता बल्कि बना- बनाया जेंडरनुमा लिबास व्यक्ति को ओढ़ा दिया जाता है। और यौनिकता को अक्सर दो विपरीत भागों में बटा मान लिया जाता है, साथ ही यह भी मान लिया जाता है कि ‘स्त्री और पुरुष के बीच का’ या ‘स्त्री और पुरुष के अतिरिक्त’ कोई और यौनिकता नहीं होती। बटलर ने “जेंडर ट्रबल” में जेंडर अदायगी या व्यवहार(performativity) के माध्यम से कई सवाल उठाये हैं।

1. “यौन संबंधों का साँचा ‘मानव’ के उद्भव से पहले है।
2. यौनिकता को ग्रहण करने की प्रक्रिया से गुजरते हुए ‘मैं’ का निर्माण होता जाता है” [32]।

Robert j.Stoller (रॉबर्ट जे स्टॉलर) के अनुसार -“यौनिक शब्द में शरीर रचना और शरीर विज्ञान का अर्थ निहित है। यह स्पष्ट रूप से व्यवहार, भावनाओं, विचारों और कल्पनाओं के उन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों को छोड़ देता है जिनका सम्बन्ध यौनिकता से है तथा मुख्य रूप से जिसका अर्थ जैविक नहीं है” [33]।

शैशावस्था से ही जेंडर और यौनिकता को इस तरह मिला दिया जाता है कि एक समय के बाद व्यक्ति उसी विशेष पहचान, जेंडर और यौनिकता को अपनी पहचान अपनी अस्मिता मानने लग जाता है। कई बार वह स्वयं को अलग पाता है, कुछ ऐसी विशेषताएं स्वयं में पाता है जिसका तालमेल समाज के रवैये के साथ नहीं बैठा पाता। इन दोनों स्थितियों के बीच के जद्दोजहद से वह लगातार लड़ता है जिसका प्रभाव उसकी पहचान पर भी पड़ता है। न तो वह अपनी उन प्रवृतियों को छोड़ पाता है जो उसकी अपनी प्रवृति (बने बनाये मानकों से भिन्न) है और न ही समाज के मानकों (स्त्री जेंडर-पुरुष जेंडर) को पूरी तरह छोड़ पाता है। यह मानक जेंडर रूपी जामा पहनाकर समाज में जीने के लिए विशिष्ट रूप प्रदान करते है। समाज में ससम्मान जीने लायक तभी बन पाते है जब वह जामा आपमें फिट हो जाये या कि आपही उस जामा में ख़ुद को फिट कर लें। उदहरणस्वरूप हमारे समाज में किन्नर वर्ग कि अवस्थिति बेहद चिंताजनक है। तथाकथित मुख्यधारा का समाज न ही उसे पूरी तरह अपना पाता है और न ही उन्हें स्वीकार कर पाता है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था के आवश्यकता के अनुरूप ही बाइनरी जेंडर व्यवस्था का निर्माण हुआ है। सत्ता निर्माताओं के मस्तिष्क में यह बात नहीं आयी कि बाइनरी जेंडर और उसके आधार पर निर्मित व्यवस्था के बाहर भी कई पहचान और यौनिकता के प्रकार होते हैं। ऐसी धारणा दरअसल धीरे-धीरे अपनी पैठ बनाती गयी। जबकि इसका सम्बन्ध किसी भी प्रकार से जैविक या प्राकृतिक नहीं है। इसके पीछे जिस

तरह पितृसत्तात्मक राजनीतिक दर्शन काम करता है उसे Kate Millett (केट मिलेट) 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स' कहती हैं। केट मिलेट 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स'(1970) के जरिये उस पूरी राजनीति की तहों को खोलती नजर आती है जो यौनिकता के इर्द-गिर्द रची जाती है। और जिन्हें प्रसारित करने की प्रक्रिया बदस्तूर जारी है।

जेंडरगत असमानता के मूल में समाज के वे संस्थाए व संगठन है जिन्होंने उनके बीच पहले और दूसरे की विभाजन रेखा खिंची न कि जैविक भेद ने। यौनिकता के दो प्रकार (स्त्री-पुरुष) जेंडरगत तौर-तरीकों द्वारा विभाजित यौनिकता है ; जो लम्बे समय से चली आ रही है। ईसाई धर्म और हिन्दू धर्म में स्त्रियों की रजस्वला अवस्था को अपवित्र बताया गया है। उस रज को हीन बनाने की कोशिश की गयी है जिससे सृष्टि होती है। इस तरह धीरे-धीरे पितृसत्ता की जड़े गहरे आसीन होती गयी है। जिसने पहले अपनी सत्ता स्थापित की, जेंडर की निर्मिती की, उसका बाइनरी विभाजन किया और उसके आधार पर यौनिकता की द्विमुखी परिभाषा गढ़ी।

Friedrich Engels (एंगेल्स) की पुस्तक 'The Origin of Family, Private Property and The State (1884) (दि ओरिजिन ऑफ़ फैमिली, प्राइवेट प्रोपर्टी एंड दि स्टेट) के आने के बाद जेंडर के बनने और बनाये जाने की प्रक्रिया पर आलोचना शुरू हुयी। 'ए रूम ऑफ़ वंस ओन' (1929) में वर्जिनिया वुल्फ बताती है कि जेंडर पहचान जन्म से नहीं बल्कि समाज द्वारा निर्मित किया जाता है जो धीरे-धीरे व्यवहार में शामिल होता जाता है। नारी और पुरुष लक्षण से अलग लक्षण भी मनुष्यों में हो सकते है पितृसत्ता यह मानने को तैयार नहीं और यही मानक संस्कृति, समाज, धर्म, राजनीति हर क्षेत्र में अपनी जड़े जमाती रही। लड़की के गुण (समाज द्वारा निर्मित) लड़के में और लड़के के गुण (समाज द्वारा निर्मित) लड़की में देखना समाज को सहनीय नहीं है। ऐसे गुणों की निंदा के लिए लोग तैयार रहते हैं।

विक्टोरियन व्यवस्था की मूल रणनीति स्त्री और पुरुषों को अलग-अलग भूमिकाओं में बांधकर उनके बीच परस्पर विरोधी तस्वीर खींचनी थी। लेकिन इसी विक्टोरियायी युग ने सेक्सुअलिटी पर विचार-विमर्श के नूतन सन्दर्भों को भी जन्म दिया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान महिलाएं दफ्तरों, बैंकों, कारखानों, जैसे पेशे में काम करने लगी, क्योंकि पुरुषों को इन कामों को छोड़कर युद्ध के लिए जाना पड़ा। अतः युद्धकालीन स्थिति में पितृसत्ता द्वारा स्थापित जेंडर भेद और श्रम-विभाजन की दीवारों को जारी रखना संभव न हो सका। यूरोप में इस युद्ध के कारण यौन-उन्मुक्तता आयी। इस दौरान अचानक स्त्रियों को अहसास हुआ की समाज उन पर शासन कर रहा है। पितृसत्तात्मकता ने चाहा कि युद्ध-क्षेत्र से लौटे पुरुषों के बाह्य काम-काज को छोड़कर स्त्रियां वापस घरों की ओर लौट जाएं। दूसरी ओर महिला संगठन जेंडर भेदभाव से मुक्ति और समानता को मान्यता दिलाने के संघर्ष में जुट गये थे। युद्ध के बाद स्थितियां बदली और महिलाओं की भूमिका भी बदली।

बाइनरी जेंडर व्यवस्था सामाजिक धारणा बनी हुयी हैं। समाज के विभिन्न संस्थाओं द्वारा इन धारणाओं को उकसाने और मुकम्मल रूप देने की कोशिश निरंतर चलती रहती है। बचपन से ही बच्चे तयशुदा भूमिकाओं के अनुकूल गढ़े जाते हैं। जो संस्कृति की मांगों के अनुरूप कृत्रिम रूप से लादी जाती है। इस भूमिका के हम इतने आदि हो जाते है कि जेंडर भूमिका के बदलते और निर्मित यौनिकता (सेक्सुअलिटी) से भिन्न यौनिकता को देखते ही हायतौबा मच जाती है।

बाइनरी जेंडर का सामाजिक ढांचा ऐसे मानदंड तय करता है जो पुल्लिंग और स्त्रीलिंग में विभाजित होता है। जहां अन्य किसी जेंडर और यौनिकता की अभिव्यक्ति का कही कोई जगह नहीं होता। विज्ञापन, धर्म, कानून, टीवी जैसे सभी माध्यम द्विधारी जेंडर व्यवस्था पर टीके होते है, जिसके आधार पर मानसिक विकास का निर्माण चलता रहता है। जेंडर स्टीरियोटाइप सांचा विज्ञापनों, पाठ्य-पुस्तकों, रोजमर्रा के व्यवहार, संस्कृति, त्यौहारों, भाषा की बदौलत पुख्ता होता जाता है। हमारे अचेतन मन में न जाने कितने ही

जेंडर स्टीरियोटाइप ने अपनी जगह बना ली है, जो स्त्रीलिंग-पुल्लिंग निर्माण प्रक्रिया के बीच से तैयार होती है। माना जाता है कि स्त्री शर्मीली और कोमल होती है और पुरुष ठीक इन गुणों के विपरीत। यह भी धारणा है कि स्त्री घर की लक्ष्मी होती हैं, दयालु होती है, शर्मीली होती है, ताकि पुरुष के बहिर्मुखी होने की नींव पड़ सके। पर क्या हर पुरुष बहादुर और दु:साहसी होता हैं ? क्या वाकई हर स्त्री शर्मीली, कोमल और निर्भरशील होती हैं ?

Kate Millett : Sexual Politics (1970) में लिखती है, जिसका अनुवाद मल्लिका सेनगुप्त करती हैं - "समाज में हमारे लिंग सम्बन्ध पर निःस्वार्थ भाव से गौर करने पर देखा जायेगा कि स्त्रीलिंग व पुल्लिंग के बीच न सिर्फ वर्तमान समय में ; बल्कि अब तक के इतिहास के पन्ने पर ऐसी घटनाओं की पुनरावृति हुई है। मैक्स हेब्बार ने जिसे 'हेरशैफ्ट' यानी क्षेष्ठता का दासत्व का सम्बन्ध बताया है, हमारे समाज में जो अक्सर जांच-परखकर देखा नहीं जाता, यहां तक कि उस पर गौर भी नहीं किया जाता (हालाँकि वह संस्थागत हो उठता है) वह है वही जन्मजात विशेषाधिकार कि लड़के अपनी चलाएंगे और लड़कियां उस पर अमल करेंगी। इस व्यवस्था में निहित उपनिवेशीकरण उजागर होता है। अन्य सभी निर्वासनों से कठोरतम, वर्ग-वैषम्य से व्यापक, और भी सुदृढ़, सुविन्यास्त और दीर्घस्थायी हो जाता है .....लिंग-प्राधान्य का दर्शन हमारी संस्कृति की एक ऐसी अवधारणा है, जिससे आदिमयुगीन क्षमता की धारणा पैदा होती है"[34]।

ईसा पूर्व 12000 से 8000 साल तक के प्राप्त तथ्यों के अनुसार सभ्य समाज से पहले स्त्रियां यौन संबंधों में आजाद थीं। यौनिक संबंधों के इस आजादी को सबसे पहले सामाजिक मानकों और नियमों से बाँधा गया, और तब 'परिवार' नामक संस्था का विस्तार हुआ। जिसकी चालक पितृसत्तात्मक व्यवस्था थी । एंगेल्स पितृसत्तात्मक व्यवस्था की समाप्ति चाहते थे। क्योंकि इस व्यवस्था की समाप्ति से न केवल स्त्री-

पुरुष जेंडर भूमिकाओं की समाप्ति होगी बल्कि उन्हें भी पहचान और जगह मिलेगी जो इस द्विधारी व्यवस्था में फिट नहीं हो पा रहे थे।

यौनिक स्वतंत्रता से जुड़े तथ्यों और इतिहास के जिक्र करने का आशय यहां इसे सही या गलत ठहराना कत्तई नहीं है, बल्कि इससे इस बात को समझना जरूरी है कि किस तरह पितृसत्ता ने पुरुष के हाथों सत्ता सौंपा; इस सत्ता ने कैसे आबादी को दो हिस्सों में बांटा, कैसे एक प्राइमरी तो दूसरी सेकेंडरी बनी ? कैसे स्वयं को नियंत्रक और दूसरे को चालक बनाया। जिससे प्राइमरी, सेकेंडरी पर अपनी सत्ता स्थापित कर सके। जरा सोचिये की स्त्री-पुरुष पहचान से अलग भूमिकाओं को मानने वाले पहचानों या अलग तरह के यौनिकता का दावा करने वाले लोगों पर पितृसत्ता का शासन करना आसान होता ? तो उत्तर है नहीं। और इसीलिए 'पुरुष-स्त्री' से अलग पहचान रखने वाले लोगों जैसे हिजड़ाओं तथा अन्य पहचानों को कॉर्नर कर दिया और यौनिकता की वैविध्यता इस दो (स्त्री-पुरुष) तक आकर सिमट गई। विवाह से उत्पन्न संतान को पुण्यकार्य और विवाहेत्तर संतान को पाप बताकर, रजःनिवृति स्त्री का शुभ कामों में भाग न लेना जैसे आख्यान गढ़े ही इसलिए गए हैं ताकि जेंडर और यौनिकता का द्विभाजिकरण किया जा सके। फिर धीरे-धीरे इसके सिद्धांत गढ़े गये।

Simone (सिमोन) जैविक वैविध्यता को मानती है और अपनी पुस्तक 'The Second Sex' में इस वैविध्यता का विवेचन करती है। वह कहती है-"यदि एक बार जगत के विनियोजन का तरीका बदल जाए और मूल्यों की परियोजना भिन्न बन जाए, तब मूल्यांकन के लिए शारीरिक शक्ति की इतनी जरुरत नहीं रहेगी। पारंपरिक रूप से हिंसा को प्रश्रय देने वाली मांसपेशियों की ताकत के आधार पर किसी को प्रभुता नहीं मिलनी चाहिए"[35] उनकी इस युक्ति से यह स्पष्ट होता है कि वह पुरुष को स्त्री की अपेक्षा अधिक ताकतवर मानती है लेकिन इस ताकत के बल पर चल रहे प्रभुता को ख़ारिज करती हैं। वह जैविक वैविध्यता को तो मानती है परन्तु उसके आधार पर प्रभुत्व और वर्चस्ववाद की आलोचना करती हैं। "मानव-इतिहास

में उत्पादन तथा पुनः उत्पादन की ताकतों में संतुलन विभिन्न आर्थिक अवस्थाओं और विभिन्न साधनों के जरिए लाया गया हैं। इन्हीं परिस्थितियों ने औरत और पुरुष के संबंधों का नियमन किया है। हम केवल जैविक आधार पर एक सेक्स की प्रधानता दूसरे सेक्स के ऊपर नहीं आरोपित कर सकते" [36] सीमोन सेक्सुअल प्रवृतियों को सहज मानती है। जिन साधनों और अवस्थाओं ने स्त्री-पुरुष के संबंधों का नियमन किया उन्हीं साधनों ने जेंडर का द्विभाजीकरण किया और समाज को दो हिस्सों में बांट दिया। रीति-रिवाजों और तौर-तरीकों ने इसे स्वाभाविक साबीत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

इधर "1970 में एक एन कोडेट क्लीननिकल टेस्ट के परिणामों के आधार पर महिलाओं पर सर्वे कर इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि महिलाओं के यौन सुख के लिए क्लिटोरिस नामक एक छोटा सा अंग बहुत जरुरी है, योनी या वैजाइना नहीं। इस बारे में पुराणी धारणाएं गलत साबित हुई। कोडेट का लेख 'द मिथ ऑफ़ वैजाइनल ऑरगैज्म' ने अतिवादी नारीवादियों को एक वैज्ञानिक आधार दे दिया। उनके मतानुसार पुरुषों ने अपनी सुविधा के मुताबिक यौनता की जो धारणा बनायी, वह बहुत मामलों में महिलाओं को सुख प्रदान करने में बेकार हो गयी। तब उसी नारी में नारी शिथिलता का नाम देकर एक तरह से यौन-शोषण की पृष्ठभूमि तैयार हुई। कोडेट कहती हैं-आमतौर पर पुरुष यौन-शिथिलता या शीतलता कहने का तात्पर्य महिलाओं के वैजाइनल ऑरगैज्म की विफलता मान लेते हैं। जबकि दरअसल, वैजाइना कोई बहुत ही संवेदनशील अंग नहीं है और ऑरगैज्म के लिए वह नहीं बना है। यौन संवेदनशीलता का केंद्र क्लिटोरिस, जो शिश्न की ही तरह नारी अंग है। इसीलिए परंपरागत श्रृंगार-भंगिमाओं के दौरान जब क्लिटोरिस पूरी तरह उत्तेजित नहीं होता, तब हमें यौन शिथिलता का आरोप लगाकर परे कर दिया जाता है। जिन महिलाओं को ऐसी शिकायत होती है, उन्हें मनोचिकित्सक से सलाह लेने को कहा जाता है, ताकि वे समस्या को ठीक तरह से समझ सकें। ऐसे ज्यादातर मामलों में एक महिला के रूप में तयशुदा भूमिका पालन करने में नाकाम

होने के कारण पैदा होनेवाली समस्या का हल मनोचिकित्सक निकालते हैं। इससे परंपरागत यौनता और उसमें हमारी भूमिका पर कुछ जिज्ञासाओं से भरे सवाल उठ खड़े होते हैं"[37]।

John S.Mill (जे.एस.मिल) विक्टोरियन युग में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति का वर्णन इतिहास के माध्यम से करते है तथा कानूनी बंधन की स्थितियों, दुर्बल शिक्षा और 'स्त्री अधीनता' पर प्रहार करते हैं। वह लिखते है-"यह सिद्धांत दो जेंडरों के बीच विद्यमान सामाजिक संबंधों को नियंत्रित करता है, एक का दूसरे पर कानूनी परतंत्रता अपने-आप में गलत है। यह मानव सुधार की दिशा में अब प्रमुख व्यवधान है जिसे समानता के सिद्धांत के द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। यह निश्चित करना होगा कि एक तरफ शक्ति या विशेषाधिकार तथा दूसरी तरफ अशक्तता का भाव न हो" [38]। "सांस्कृतिक रूप से मान्यता प्राप्त स्त्री-छवी का मतलब था कि औरत की सेक्सुअलिटी अंतिम रूप से परिभाषित मान लेना, उसका दायित्व पोषण तक सीमित कर देना,और समाज द्वारा स्वीकृत विवाह के संस्थागत ढांचे में उसे इतना समरस कर देना कि उसकी सेक्सुअलिटी पर चर्चा करने की कोई जरुरत ही न रह जाए" [39]।

"हमारी संस्कृति सेक्स के आलोचनात्मक विश्लेषण को नापसंद करती है। विशेष तौर पर स्त्री की सेक्सुअलिटी को तो यह परंपरा तीन हथकंडों का एक साथ इस्तेमाल करके सीमित करने की कोशिश करती है। ये तीन हथकंडे हैं वर्जना, महिमामंडन और नकार। पहले तो स्त्री की सेक्सुअलिटी के बारे में बोलना ही दिक्कततलब है, ऊपर से इन तीनों हथकंडों का मुकाबला करते हुए बोलने का मतलब होगा तीखी प्रतिक्रियाओं का सामना करना" [40]।

जेंडर और यौनिक चर्चा के विकास में जिन पुस्तकों का महत्वपूर्ण योगदान है उनमें से एक फ्रेडरिक एंगेल्स की पुस्तक 'परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति' हैं। एंगेल्स ने खुलकर यह घोषणा की कि विवाह तथा परिवार नामक संस्था की उत्पत्ति स्त्री पर स्वामित्त्व की स्थापना से हुई। जुडीथ बटलर अपनी पुस्तक 'जेंडर ट्रबल'(1999) के प्रकाशित संस्करण की भूमिका में बताती है कि "यह विषमलैंगिक मानक

नहीं है जो ‘जेंडर’ को उत्पन्न तथा संघटित करता है बल्कि यह जेंडर अनुक्रम है जो विषमलैंगिक संबंधों को रेखांकित करता है। यदि जेंडर अनुक्रम जेंडर के क्रियाशील धारणा को निर्धारित करता है तो क्या जेंडर ही जेंडर का कारण बनता है और नियमन पुनरुक्ति में परिणत हो जाता है। ” [41]

“यदि कोई सोचता है कि वह किसी पुरुष को स्त्री के रूप में कपड़े पहने या किसी स्त्री को पुरुष के रूप में कपड़े पहने देखता है तो वह सबसे पहले जेंडर की ‘वास्तविकता’ के बारे में सोचता है : जिस जेंडर को उपमा द्वारा प्रस्तुत किया जाता है वह वास्तविकता नहीं है तथा भ्रामक स्थिति पैदा करता है ” [42]। “अगर कोई एक स्त्री “है” तो इसका यह आशय नहीं है कि हर स्त्री ‘स्त्री ही होगी’। यह सन्दर्भ सर्वग्राही नहीं है। इसलिए नहीं कि पूर्व निर्धारित जेंडरयुक्त ‘व्यक्ति’ अपने जेंडर का रूपांतरण कर अतिक्रमण करता है बल्कि इसलिए कि जेंडर हमेशा सुसंगठित नहीं होता तथा निरंतर बिभिन्न ऐतिहासिक सन्दर्भों में जेंडर पहचान जाति, वर्ग, नृजातीय, यौनिक और क्षेत्रीय तौर-तरीकों द्वारा बड़ी सावधानी से गठित होते हैं। फलस्वरूप जेंडर को राजनीति तथा संस्कृति से अलग करना असंभव हो जाता है, जिसके अंतर्गत वह निरंतर उत्पन्न तथा पोषित होता है। ” [43]

सन् 1965 में भारत के शिक्षा आयोग की सिफारिश थी “दोनों लिंगों के बीच परस्पर स्वाभाविक आदरभाव पैदा करने की जरुरत है; क्योंकि लिंग के आधार पर विषय या कार्यसूची का बंटवारा करना और एक खेमे को ‘मर्दाना’ और दूसरे को ‘औरताना’ कहा जाना अवैज्ञानिक है। साथ ही, इस तथ्य का व्यापक रूप से प्रचार करना होगा कि दोनों लिंगों के बीच तथाकथित मनोवैज्ञानिक अलगाव दरअसल, लिंग आधारित नहीं; बल्कि सामाजिक तौर पर निर्मित है। ‘मर्दाना’ और ‘औरताना’ व्यक्तित्व की स्टिरियोटाइप धारणा समाज का भला करने की अपेक्षा कहीं अधिक नुकसान पहुंचा रही है, यह बात आम लोगों को समझनी होगी” [44] इस आधार पर यह कहना गलत नहीं होगा कि जेंडर के आधार पर कार्यों का बंटवारा

ही नहीं बल्कि पूरे समाज को द्विधारी व्यवस्था में बाँट देना भी दरअसल अवैज्ञानिक है। जेंडरीकरण की अनिवार्यता अनिवार्य आवश्यकता की तरह सभ्यता, समाज और साहित्य में व्याप्त हो चुकी है।

हाँगकांग में सन् 1999 में हुई 'World Congress of Sexology' में मनुष्य के यौनाधिकारों को मूल मानव अधिकारों में शामिल किये जाने का प्रस्ताव पारित हुआ। इसमें यौन स्वतंत्रता, यौन रूचि, यौन चयन, यौन आनंद की रक्षा, यौन स्वास्थ्य की सुरक्षा तथा प्रजनन के निर्णय का अवसर जैसे प्रस्ताव शामिल है।

धुंधले चश्मे से देखने पर दुनिया बाइनरी जेंडरयुक्त ही दिखेगी। जरुरत है इस धुंधले चश्मे को पोछने की; संकीर्ण दृष्टिकोण को व्यापक बनाने की और दुनिया को सहजता से देखने, समझने और स्वीकारने की। क्यों स्त्री-पुरुष को सहजता से बड़ा नहीं होने दिया जाता ? क्यों बालक शिशु की कोमलता धीरे-धीरे पुरुष कठोरता में तब्दील होने लगती है ? क्यों इन बातो को स्त्री खासियत और पुरुष खासियत की तरह बताया जाता है ? क्या इस खासियत में किसी तरह का भेदभाव नहीं होता ? क्या एक में श्रेष्ठता और दूसरे को निकृष्ट समझने की भावना का जन्म नहीं होता ? एंगेल्स की माने तो वर्ग समाज के शुरू होने से पूर्व जो समाज था, वह नारी-प्रधान समाज था। और तब तक परिवार नामक संस्था और संपत्ति नामक अवधारणा नहीं थी। वाजिब है कि तब तक राजनीतिक सत्ता ने अपने पंख नहीं फैलाये थे।

जेंडर और यौनिकता एक-दूसरे से अलग तो है पर कुछ हद तक एक-दूसरे से जुड़े भी है। जहां कुछ लोगों के लिए जेंडर और यौनिकता का मेल उन्हें उनकी अपनी पहचान प्रदान करता है वही कुछ लोगों के लिए इसका बेमेल उन्हें उनकी अपनी पहचान को प्रभावित करता है। जैसे ट्रांसजेंडर। कुछ ट्रांसजेंडर चिकित्सिय हस्तक्षेप द्वारा अपने शरीर को बदलना चाहते है और कुछ नहीं। यह परिवर्तन मात्र एक विकल्प नहीं बल्कि स्वास्थ्य एवं सुख के लिए भी आवश्यक है। अतः जेंडर और यौनिकता का सम्बन्ध निजता से है; वैविध्यता से है।

संदर्भ :

[1] . Stoller, Robert J. (Edition: 1970). Sex and Gender, The Hogarth Press, Pg. xiii (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 436 देखें)

[2] . Stoller, Robert J. (Edition: 1970). Sex and Gender, The Hogarth Press, Pg. viii-ix (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 436-437 देखें)

[3] . मिल, जॉन स्टुअर्ट. सत्यम, कात्यायनी (संपा). (संस्करण : 2002). स्त्रियों की पराधीनता, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ.114

[4] . Stoller, Robert J (Edition:1970). Sex and Gender, The Hogarth Press, pg .40 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 437 देखें)

[5] . Stoller, Robert J (Edition: 1970). Sex and Gender, The Hogarth Press, pg . 52 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 437 देखें)

[6] . बोउवार, सीमोन द. खेतान, प्रभा (अनु). (संस्करण : 1990). स्त्री उपेक्षिता, नई दिल्ली : हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रकाशन, पृष्ठ.133

[7] . Millett, Kate (Edition: 1970). Sexual politics, Doubleday and co. (U.S), Pg. 9

[8] . Friedan, Betty (Edition: 1963). The feminine mystique, w.w.norton and company New York London, Pg.160 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 437-438 देखें)

[9] . एंगेल्स, फ्रेडरिक (संस्करण : 2010). परिवार,निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ. 69

[10] . Millett, Kate (Edition: 1970). Sexual politics, Doubleday and co. (U.S), pg. 25

[11] . Millett, Kate (Edition: 1970). Sexual politics, Doubleday and co. (U.S), pg. 26

[12] . Millett, Kate (Edition: 1970). Sexual politics, Doubleday and co. (U.S), Pg.31

[13] . Foucault, Michel (Edition: 1978). History of sexuality, Vol .1, pg. 83 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 438 देखें)

[14] . बोउवार, सीमोन द. खेतान, प्रभा (अनु). (संस्करण : 1990). स्त्री उपेक्षिता, नई दिल्ली : हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रकाशन, पृष्ठ. 37

[15] . वी. गीता, ऋचा. (अनुवाद) (संस्करण : 2018). जेंडर विमर्श, नयी दिल्ली : प्रकाशन संस्थान, पृष्ठ.110

[16] . सेनगुप्ता, मल्लिका . शाह, साधना (अनु) . (प्रथम संस्करण: 2007). स्त्रीलिंग निर्माण, गाजियाबाद : रेमाधव पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ.15

[17] . सेनगुप्ता, मल्लिका . शाह, साधना (अनु) . (प्रथम संस्करण: 2007). स्त्रीलिंग निर्माण, गाजियाबाद : रेमाधव पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ. 70

[18] . निरंतर एक ऐसी संस्था है जो जेन्डर और शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं।

[19] . खुलती परतें. यौनिकता और हम, निभाग-1, निरंतर, पृष्ठ.76

[20] . Agrawal, Bina (Edition: 1996). A field of one's own: Gender and land rights in south Asia, New Delhi: Cambridge University press, Pg.51 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 438-439 देखें)

[21] . Mis, Mariya (Edition: 1988). 'The social origin of sexual Division of Labour', women the last colony, Pg.73

[22] . Butler, Judith (Edition: 1990). Gender trouble, Pg. 186-191

[23] . Buttler, Judith P (Edition: 1999). Gender Trouble, Preface, Routledge, New York, NY, Pg.xiv (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 439 देखें)

[24] . Buttler, Judith P (Edition: 1999). Gender Trouble, Preface, Routledge, New York, NY, Pg.11

[25] . Butler, Judith (Edition: 1993). Bodies that Matter, Routledge, Pg. xi-xii (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 439 देखें)

[26] . भसीन, कमला. शिवपुरी, वीणा (अनुवाद) (प्रथम संस्करण : 2000). जागोरी, पृष्ठ.2

[27] . पांडे, मृणाल (प्रथम संस्करण : 2006). जहां औरतें गढ़ी जाती है, नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ.8

[28] . सुजाता (संस्करण : 2019). स्त्री निर्मिति, नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, पृष्ठ. 66-67

[29] . सुजाता (संस्करण : 2019). स्त्री निर्मिति, नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, पृष्ठ.94

[30] . वही. पृष्ठ. 73

[31] . सेनगुप्ता, मल्लिका . शाह, साधना (अनु) . (प्रथम संस्करण: 2007). स्त्रीलिंग निर्माण, गाजियाबाद : रेमाधव पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ. 110

[32] . Butler, Judith (Edition: 1993). Bodies that Matter, Routledge, Pg. xiii, xvii (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 439 देखें)

[33] . Stoller, Robert J (Edition: 1970). Sex and Gender, The Hogarth Press, Pg. ix (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 440 देखें)

[34] . गीताश्री (प्रथम संस्करण : 2008). स्त्री आकांक्षा के मानचित्र, नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, पृष्ठ.125-126

[35] . बोउवार, सीमोन द. खेतान, प्रभा (अनु). (संस्करण : 1990). स्त्री उपेक्षिता, नई दिल्ली : हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रकाशन, पृष्ठ-32

[36] . बोउवार, सीमोन द. खेतान, प्रभा (अनु). (संस्करण : 1990). स्त्री उपेक्षिता, नई दिल्ली : हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रकाशन, पृष्ठ.36

[37] . सेनगुप्त, मल्लिका . शाह, साधना (अनु) . (प्रथम संस्करण: 2007). स्त्रीलिंग निर्माण, गाजियाबाद : रेमाधव पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ. 134

[38] . Millett, Kate (Edition: 1970). Sexual politics, Doubleday and co. (U.S), Pg.62

[39] . यू.विंध्या. मैरी ई.जॉन और जानकी नायर (सं). दुबे, अभय कुमार (अनु). (2008). स्त्री-कामरेड और सेक्सुअलिटी. कामसूत्र से कामसूत्र तक. पृष्ठ110-111

[40] . यू.विंध्या. मैरी ई.जॉन और जानकी नायर (सं). दुबे, अभय कुमार (अनु). (प्रथसम संस्करण : 2008). स्त्री-कामरेड और सेक्सुअलिटी : कामसूत्र से कामसूत्र तक, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, पृष्ठ. 111

[41] . Buttler, Judith P (Edition: 1999). Gender Trouble, Preface, Routledge, New York, NY, Pg.xii (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 440 देखें)

[42] . Buttler, Judith P (Edition: 1999). Gender Trouble, Preface, Routledge, New York, NY, Pg. xxii (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 440 देखें)

[43] . Buttler, Judith P (Edition1999). Gender Trouble, Preface, Routledge, New York, NY, Pg.6 (मूल के लिए शोध ग्रंथ का पृष्ठ संख्या 440-441 देखें)

[44] . शिक्षा आयोग, भारत, (1965). पृष्ठ.4-5